सम्पादक के नाम

भारत में मुसलमान आये तब भारत के लोगों को कपड़ा सिलना आया

भारत सुई की खोज तक नहीं कर पाया था। उससे पहले तक भारतीय लोग नीचे धोती लपेटते थे। सर पर पगड़ी लपेटते थे। औरतें साड़ी लपेट लेती थी। भारत के लोगों को कपड़ा सिलना नहीं आता था, सिर्फ़ लपेटना आता था।

अब गप्प मार रहे हैं कि महाभारत के समय हमारे पास तो इन्टरनेट भी था। और हमारे पास तो पुष्पक विमान था।

इस तरह की बातें करना बन्द करो।

अपने बच्चों को हनुमान का सूरज खाना और तीर से बारिश करना जैसी कहानियों से मुक्ति दिलाओ। उन्हें विज्ञान पढ़ाओ। दुनिया के साथ मिलजुलकर रहना सिखाओ। छोड़ दो बेवकूफियाँ। कहीं नहीं पहुंच पाओगे गाल बजाने से।

दुनिया भर में भद्द पिट रही है तुम्हारी।

- हिमांशु कुमार

यदि आप सच्चे न्याय प्रिय हैं और अन्याय से आप का खून खौल उठता है.....

सबसे पहले उस जगह के बारे में सोचिए जहां आप खुद कार्य करते हैं। अपने आप से पूछिये कि अपने सहकर्मी के साथ हो रहे प्रशासनिक अन्याय के विरूद्ध आप ने आवाज क्यों नहीं उठाई। आप को पता है,आप का अफसर भ्रष्ट है, हर तरह के काम में कमीशन लेता है। आप अपने आप से पूछिये कि नौकरी को खतरे में डालकर आप नें कमीशनखोरी के खिलाफ आंदोलन क्यों नहीं चलाया। मुझे पता है,जवाब में आप कहेंगे कि अकेले लडना 'हीरोइज्म' है। हमारा काम सामाजिक चेतना विकासित करना है ... आदि। अब यह किसी से छिपा नहीं है कि इस छदम तर्क नें नकली लोगों को असली समाज सेवी कहलाने का भरपूर अवसर दिया है। चलिए मान लेते हैं कि आप अकेले नहीं लड सकते थे। आप से यह भी नहीं पूछते हैं कि आप ने अपने कार्यस्थल पर साथियों को साथ लेकर लडने के बारे में क्यों नहीं सोचा। मगर यह तो बता दीजिए कि विभागीय भ्रष्टाचार में आप स्व्यं भागीदार बनते हैं या नहीं। और इतने सारे अन्यायों के बीच रहते हुए आप की आत्मा को कभी घुटन महसूस होती है या नहीं। भ्रष्टाचार की धारा से अलग रहने का आप ने कभी प्रयास किया या नहीं।

मुझे पता है,आप के पास इन सवालों का एक ही जवाब है- नहीं। ऐसे 'न्याय प्रिय' लोग जब समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए प्रतिश्रुत किसी पार्टी या संगठन में सक्रिय होते हैं तो ये सत्ता जहां मूर्त रूप में अपनी नीचता का नंगा नाच दिखा रही होती है,वहां नहीं जाते। हर तरह के सम्मुख विरोध से बचकर चलते हैं। सिर्फ सत्ता के अमूर्त ठिकानों पर काठ की तलवारों से प्रहार करते रहते हैं। ये ऐसा इसलिए करते हैं क्योंकि स्वयं भ्रष्टाचार में अपना हिस्सा छोडने के लिए तैयार नहीं होते हैं।भ्रष्टाचार में आकण्ठ डूबा रहकर अपने आप को सबसे बेदाग और जनधर्मी साबित करा लेने में माहिर ऐसे बीसियों लोगों को नजदीक से जानता हूं ।

ये लोग देश से भष्ट्राचार तो क्या,पूरा का पूरा समाज ही बदल डालना चाहते हैं। शोषण विहीन समाज का सपना देखने का दिखावा दिन रात करते रहते हैं। भष्ट्राचार और दुर्व्यवस्था के लिए बदनाम सरकारी संभागों में उंचे पदों पर बैठे हुएं ये लोग दुनिया भर के ऐश्वर्य से घर को भरते रहते हैं। अपने विभागीय बदइंतजामी को ठीक करने के लिए कभी कोई प्रयास नहीं करते । भ्रष्टाचार की धारा में बराबर शामिल रहते हैं। कभी किसी के खिलाफ कुछ नहीं बोलते। अपने विभागों में हमेशा छिप कर रहते हैं।

ऐसे भ्रष्ट लोगों के पास जब सब कुछ हो जाता है तो उन्हें प्रगतिशील बुद्धिजीवी कवि,कथाकार,समाज सेवी सांस्कृतिक कर्मी आदि होने का खब्त सवार होता है। मजे की बात ये कि कुछ पिछ लग्गू किस्म के लोग मामूली लोभ के बशीभूत ऐसे भ्रष्ट अफसरों को महान समाजसेवी कवि कथाकार संस्कृतिकर्मी आदि बनाने के लिए मिल भी जाते हैं।

देश में ऐसे ऑफसरों के पैसे और प्रताप से चलने वाले परिवर्तन कामी संगठनों की भरमार है। इनकी सक्रियता इतनी आक्रामक होती है कि कईबार लगता है कि ये सचमुच ही देश की दिशा को नेतृत्व देने वाले लोग हैं। मगर अपनी लगातार उपस्थिति के बावजूद समाज में कोई भी हलचल पैदा नहीं कर पाते हैं । इसका एक मात्र कारण यह है कि वे समाज के वास्तविक शत्रुओं से लडने की बजाय उसकी परछाहीं से लडने का दिखावा करके क्रातिकारी कहलाना पसंद करते हैं।

- कपिल देव त्रिपाठी

जज लोया मामले में अंततः वही हुआ, जिसकी अपेक्षा थी...

ये अपेक्षा इसलिए नहीं थी कि सुप्रीम कोर्ट पर भरोसा था..बल्कि इसलिए कि पता था कि देश किस ओर जा रहा है...

ख़ैर चूंकि क़ानूनी मामला है, तो क़ानूनी एंगल से बात करता हूं...

सुप्रीम कोर्ट ने कहा है कि जज लोया के साथ मौजूद जजों के बयान पर संदेह करने का कोई कारण नहीं होना चाहिए...क्यों? क्योंकि वह ज़िम्मेदार जज हैं...

अदालत को ये बताना चाहिए कि किसी की मृत्यु पर बयान देते समय, वह जज हैं या फिर एक गवाह?? क़ानूनन वह उस समय गवाह हैं, न कि वह अदालत में कोई केस निपटा रहे हैं...ऐसे में उनकी निष्ठा या बयान पर शक को अवमानना बना देने जैसी बात भयानक तरीके से न केवल अतार्किक है, यह क़ानून और संविधान की अवमानना है...

क्या जजों की नीयत पर शक न करने का कोई क़ानून सीआरपीसी में है या आईपीसी में इस पर कोई सज़ा का प्रावधान है?

क्या इस फैसले में कही गई ये बात, मौलिक अधिकारों में वर्णित अभिव्यक्ति और संवैधानिक उपचारों के अधिकार का हनन नहीं करती...

अगर सिर्फ कोई जज है, इस लिए उसके नागरिक के तौर पर दिए गए बयान पर अविश्वास करना ही ईशनिंदा सरीखा है...तो फिर जस्टिस कर्णन के मामले में सुप्रीम कोर्ट की यही अवधारणा कहां थी?

आप कहेंगे कि क्या न्यायपालिका पर भरोसा नहीं...क़ानून पर नहीं...आपको थोड़ा आसान तरीके से समझाता हूं...क़ानून या संविधान पर भरोसा होना और न्यायाधीशों और न्यायपालिका पर भरोसा होना, दो अलग बातें हैं...ठीक वैसे ही...जैसे मुझे चिकित्सा विज्ञान पर भरोसा होगा...लेकिन मुझे पूरा अधिकार है अपनी समझ से डॉक्टरों और अस्पताल पर भरोसा करने या न करने का...

और ये किसी भी तरह असंवैधानिक नहीं है...संविधान की पुनर्व्याख्या का काम अब अपने आप शुरु हो जाएगा...मैं चाहता हूं कि अदालत याचिकाकर्ताओं पर अवमानना का केस दर्ज करे और याचिकाकर्ता डरें नहीं....

बाकी मैं न्याय के देवताओं से जनता तक सबको पाकिस्तान के सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस इफ्तिख़ार गिलानी की याद दिलाना चाहता हूं...जिन्होंने परवेज़ मुशर्रफ के सामने झुकने से मना कर दिया था...

मैं जानता हूं कि हमारी न्यायपालिका अतिसक्रिय और अद्भुत है...इसे बचा लिया, तो देश बच जाएगा...बाकी याद रहे, हर मनुष्य कमज़ोर होता है...मज़बूत भी...मानव हो कर, आप किसी भी पद पर हों, आप शंका से परे नहीं हो सकते...लोकतंत्र और संविधान इसीलिए होते हैं...कि कोई अपने पद की वजह से न तो अन्याय कर सके...न ही न्याय से बचे...

और हां, न्यायपालिका, चुनाव आयोग ये संवैधानिक संस्था हैं...अहम हैं...इसीलिए इनको बचाना ज़रूरी है...ज़रूरी हैं कि ये निष्पक्ष रहें...बाकी इनको बार-बार महान बताना, न केवल इनको बेईमान कर देने की चालाकी है...पर्दा है...रिटोरिक भी है...अब मत दोहराइए...

- गिरीश मालवीय

कम, घटती आमदनी से गरीब लोग जरुरत से कम खा पा रहे हैं, इसलिए कृषि के खाद्य उत्पादन की मांग और नतीजन उसके दाम कम हो गए हैं

प्रो हिमांशु का यह विश्लेषण मिंट में प्रकाशित हुआ है7 उनका कहना है कि कृषि उत्पादन सूखे पश्चात सामान्य मानसून से सामान्य स्तर पर वापस आया है, बहुत प्रचुर नहीं हुआ कि बाजार पट जाने से कीमतें कम होतीं7 सामान्य फसल के बाद (गेंहूं के मामले में तो उत्पादन कम हुआ फिर भी दाम घटे हैं!) भी अगर दाम घटे हैं (विश्व बाजार में भी दाम गिरे नहीं हैं) तो एक ही वजह है कि घरेलु बाजार में खाद्य पदार्थों की मांग सिकुड़ी है7

कारण एक ही हो सकता है - बेतहाशा बढ़ती बेरोजगारी और खेती, उद्योग, सेवा सभी क्षेत्रों में, शहर व गांव दोनों जगह, गिरती वास्तविक मजदूरी की दर गरीब मेहनतकश जनता के बड़े हिस्से को अब अन्य उपभोग की वस्तुओं में ही नहीं बल्कि अपने भोजन तक में भी कटौती के लिए मजबूर कर रही है7 ये गिरती कीमतें खेत मजदूरों व सीमान्त किसानों के और बड़े हिस्से को निपट कंगाल कर देंगी, पर खेती छोड़कर कहीं और रोजगार पाने की गुंजाईश भी संकटग्रस्त अर्थव्यवस्था में बची नहीं है7 यह एक भयानक दुष्चक्र है7 संकट जितना हम सोच रहे हैं उससे कहीं अधिक भयानक है7 करोड़ों की तादाद में गरीब लोग भुखमरी और कुपोषण का सामना करने जा रहे हैं।

- मुकेश असीम

वह राजेंद्र सच्चर ही थे, जिनके प्रयासों से डेरा सच्चा सौदा का राम रहीम है सलाखों के पीछे

राजीव गोदारा

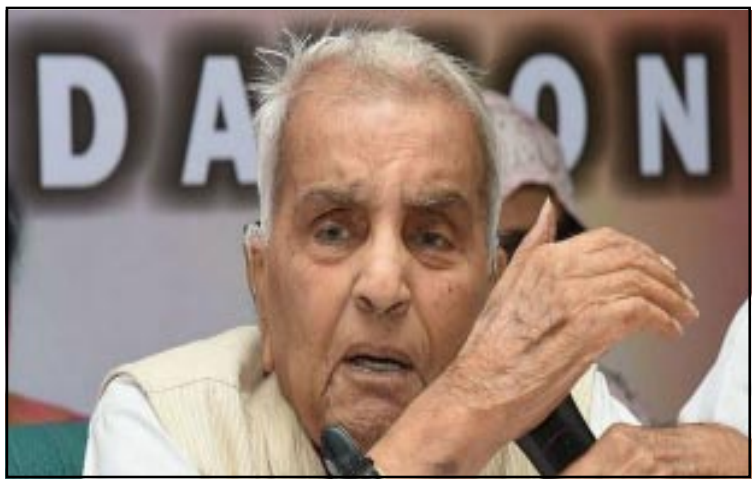

सच्चर कमेटी दिल्ली हाईकोर्ट के पूर्व मुख्य न्यायधीश व भारत में नागरिक आजादी की बुलन्द आवाज राजेन्द्र सच्चर की अगुवाई में बनी थी। राजेन्द्र सच्चर की मृत्यु के साथ वह आवाज सुनाई नहीं देगी, मगर उसकी गूंज हमेशा सुनवाई देती रहेगी....

भारत में मुस्लिम समुदाय की आर्थिक, सामाजिक व शैक्षणिक स्तर पर दयनीय स्थिति को रेखांकित करने वाली सच्चर कमेटी की रिकमेंडेशन का जिक्र पिछले सालों में भारतीय सामाजिक विमर्श का हिस्सा बना रहा है। वह सच्चर कमेटी दिल्ली हाईकोर्ट के पूर्व मुख्य न्यायधीश व भारत में नागरिक आजादी की बुलन्द आवाज राजेन्द्र सच्चर की अगुवाई में बनी थी। राजेन्द्र सच्चर की मृत्यु के साथ वह आवाज सुनाई नहीं देगी, मगर उसकी गूंज हमेशा सुनवाई देती रहेगी।

नागरिक स्वतंत्रता के आंदोलन के प्रमुख चेहरे व आपातकाल के समय जब अनेक न्यायाधीश सत्ता के सामने रेंगने लगे थे, तब भी न्यायाधीश रहते सत्ता के सामने न झुकने की वजह से उनका तबादला किया गया, मगर वे अडिग रहे। मौलिक अधिकारों के पक्षधर रहे, मानवाधिकारों के हनन वाले पोटा जैसे कानून के खिलाफ आवाज उठाने वाले, पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज के अध्यक्ष रहे व देशभर में कानून की प्रक्रियाओं का उल्लंघन करने वाली घटनाओं के खिलाफ मजबूत व सतत आवाज के तौर पर जिन राजेन्द्र सच्चर को मैं पहचानता था, उन्हें व्यक्तिगत रूप से मिलने का अवसर 2004 में मिला।

2002 में हरियाणा में सिरसा के निर्भीक पत्रकार रामचन्द्र छत्रपति की हत्या कर दी गई थी। पंजाब व हरियाणा हाईकोर्ट ने उस मामले की सीबीआई से जांच करवाने का आदेश दिया था, जिसके खिलाफ डेरा सच्चा (जिन पर छत्रपति की हत्या का आरोप था) ने सुप्रीम कोर्ट में अपील दायर कर दी थी।

सिरसा में छत्रपति के दोस्तों के बीच यह चर्चा हुई कि सुप्रीम कोर्ट में डेरे के खिलाफ कौन वकील मजबूती के साथ खड़ा हो सकता है, जो बिना फीस के छत्रपति के बेटे का वकील बन सके। तब राजेन्द्र सच्चर का नाम सभी की जुबान पर था व तय हुआ कि सच्चर जी से मिलकर निवेदन किया जाए।

तब योगेंद्र यादव के रेफरेंस से अंशुल छत्रपति (पत्रकार रामचन्द्र छत्रपति के बेटे) व अन्य दोस्त वीरेंद्र भाटिया के साथ राजेंद्र सच्चर से उनके घर में पहली मुलाकात हुई। जब छत्रपति की हत्या व डेरे की ताकत व भूमिका बारे उन्हें बताया, तो वे तुरन्त ही बिना फीस के छत्रपति का केस लड़ने को तैयार हो गए व सुप्रीम कोर्ट से सीबीआई जांच किये जाने के फैसले को बहाल रखवाया, जिसके बाद हुई जांच के बाद डेरा प्रमुख आज भी हत्या के केस आरोपी के बतौर ट्रायल भुगत रहे हैं।

इसके बाद के वर्षों में समाजवादी आंदोलन व वैकल्पिक राजनीति की राजनीतिक धारा को मजबूत करने वाले प्रयास के साथी के नाते मुलाकात हुई। 2009 में लोक राजनीति मंच के गठन की बैठकों में उनकी ऑब्जेटिविटी व वैचारिक स्पष्टता ने प्रभावित किया।

राजेन्द्र सच्चर लोक राजनीति मंच के अध्यक्ष मंडल के सदस्य थे। 2010-11 में देशभर के वैचारिक समाजवादियों को एक मंच पर लाने के प्रयास का अहम हिस्सा रहे राजेन्द्र सच्चर। इसी दौरान चण्डीगढ़ में देश भर के समाजवादियों की बैठक का आयोजन हुआ, जिसमें सच्चर ने वैकल्पिक राजनीति की दशा व दिशा को रखते हुए तात्कालिक परिस्थितियों का बेबाकी से जिक्र किया। वहां हुई लम्बी व खुली चर्चा में जाना कि वे वैकल्पिक राजनीति के साथियों की स्पष्ट पहचान कर पाने में सक्षम थे। 1923 में जन्में सच्चर ढलती उम्र के पड़ाव पर नए राजनीतिक पार्टी 'सोशलिस्ट पार्टी इंडिया' के मजबूत साथी के तौर पर खड़े हुए।

पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज के लंबे समय से मजबूत स्तम्भ रहे राजेन्द्र सच्चर से चंडीगढ़ में इस संगठन की बैठकों में अनेक बार मिलने का अवसर मिला। हर बैठक में उनकी सक्रिय भागीदारी बताती थी कि किसी विचार के प्रति गहरी प्रतिबद्धता किस तरह से कर्मठता व लगन को उत्पन करती है।

जस्टिस सच्चर राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकार सुरक्षा व कानून की समीक्षा करने वाली अनेक कमेटियों के सदस्य रहे व उनका योगदान हमेशा सारगर्भित व ठोस रहा। चाहे वह कंपनीज एक्ट की समीक्षा का मामला हो, इंडस्ट्रियल डिस्प्यूट एक्ट का या फिर प्रोटेक्शन ऑफ ह्यूमन राइट्स एक्ट का।

सिविल लिबर्टीज के प्रहरी के नाते 1990 में कश्मीर की स्थिति से लेकर मानवाधिकार व नागरिक स्वतंत्रता की अनेक घटनाओं से जुड़े मामलों में कई रिपोर्ट उनके नेतृत्व व सहयोग से पीयूसीएल ने जारी की। एक वकील के नाते, हाईकोर्ट जज बनने से पहले व रिटायरमेंट के बाद भी पोटा के मामले से लेकर तमिलनाडु में हुई आंदोलनकारियों की गिरफ्तारियों के केस अनेक मामलों को अदालत में मजबूती से लड़ा।

केन्या में हाउसिंग के सवाल पर यूनाइटेड नेशन के प्रतिनिधि के तौर पर 2000 में अपनी रिपोर्ट दी, वहीं मुंबई में झुग्गी झोंपड़ी वालों के अधिकारों के हनन की भी जांच रिपोर्ट दी।

मार्च 2005 में भारत की केंद्र सरकार ने जस्टिस सच्चर को मुस्लिम समाज की आर्थिक,सामाजिक व शैक्षणिक स्थिति का आकलन कर रिपोर्ट सौंपने का जिम्मा दिया। जो रिपोर्ट उन्होंने नवम्बर 2006 में सौंप दी। रिपोर्ट ने भारत में मुस्लिम समुदाय में बढ़ती आर्थिक व सामाजिक असुरक्षा को रेखांकित किया, वहीं बताया कि मुस्लिम आबादी का प्रतिनिधित्व सिविल सर्विस, पुलिस, सेना व राजनीति में भी बहुत कम है।

आज जस्टिर सच्चर को याद करते हुए संवैधानिक व नागरिक अधिकारों के पक्ष में खड़े होने का संकल्प लेने का वक्त है। हर खतरे को देखते हुए निर्भीकता से मानवाधिकारों की आवाज उठाना उन्हें सच्ची श्रद्धांजलि होगी।